माननीय राज्यपाल, हरियाणा प्रो0 कप्तान सिंह सोलंकी द्वारा 18 दिसम्बर, 2015 को कुरूक्षेत्र में गीता जयंती के अवसर पर आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी 'श्रीमद्भगवद्गीता की सार्वभौम प्रासंगिकता' के उद्घाटन अवसर पर दिया गया भाषण।

पूजनीय महामंडलेश्वर गीतामनीषी स्वामी ज्ञानानंद जी महाराज; हम सबका सौभाग्य है कि कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय के द्वारा आयोजित इस अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी में राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सकार्यवाहक मान्यवर सुरेश भैया जी जोशी जी का आशीर्वाद प्राप्त हुआ है; हरियाणा सरकार के शिक्षा एवं पर्यटन मंत्री– शिक्षा मंत्री तो कई होते हैं, लेकिन हरियाणा की संस्कृति को समर्पित शिक्षा मंत्री प्रो. रामबिलास शर्मा जी; परम श्रद्धेय स्वामी ज्ञानानंद जी महाराज जी के साथ सभी राज्यों को खासकर हरियाणा को जिनका मार्गदशर्न मिलता रहता है, ऐसे राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के प्रचारक श्री इन्द्रेश जी; कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय के कुलपति महोदय; मंच पर उपस्थित सभी पूज्य संतगण जिनकी उपस्थिति, अमूल्य प्रवचनों व आशीर्वाद से इस संगोष्ठी के आयोजन में चार चाँद लगे हैं; हरियाणा स्टाफ सलैक्शन कमीशन के चेयरमैन श्री भारत भूषण शास्त्री जी; दोनों विधायक श्री सुभाष सुधा जी व पवन सैनी जी; राष्ट्रीय कवि श्री विजेंद्र सोलंकी जी; इस कार्यक्रम के संयोजक सुरेन्द्र मोहन मिश्र जी; विश्वविद्यालय के कुलसचिव डा. प्रवीन कुमार सैनी जी; यह एक परंपरा है कि जो मंच पर बैठे हों उनके नाम लिए जाते हैं, लेकिन मैं देख रहा हूं कि इस सभागार में बहुत बड़ी संख्या में गणमान्य व्यक्ति उपस्थित हैं; साथ ही बहुत बड़ी संख्या में इस अवसर पर उपस्थित विद्यार्थीगण, प्रशासनिक अधिकारीगण, पत्रकार बंधुओ, भाइयो और बहनो!

बहुत देर से कार्यक्रम चल रहा है और जब भोजन ज्यादा हो जाता है तो गुलाब जामुन भी अच्छा नहीं लगता। लेकिन आज हम जिस विचार के लिए बैठे हैं वह भौतिक गुलाब जामुन नहीं है, वह आध्यात्मिक गुलाब जामुन है जो जीवन का सारतत्व है। इसलिए हम इससे कभी तृप्त नहीं होते। जितने विचार आएगें वे सब हमारे लिए ग्रहणीय ही होंगे। आज का विषय श्रीमद्भागवत गीता की सार्वभौमिकता, प्रासांगिकता है। यह विश्व की समस्याओं का निदान है। आज पूरे विश्व में शान्ति स्थापित करने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ बना है। प्रथम विश्व युद्ध के बाद लीग ऑफ नेशन्स बना था। लेकिन प्रथम विश्व युद्ध के बाद गठित अंतर्राष्ट्रीय संस्था और द्वितीय विश्व युद्ध के बाद फिर से गठित अंतर्राष्ट्रीय संस्था लीग ऑफ नेशन्स और यू0एन0ओ0 दोनों असफल हो गए। वे शान्ति का मार्ग प्रशस्त नहीं कर पाए। लेकिन गीता का ज्ञान एक ऐसा ज्ञान है जो पूरे विश्व में शान्ति स्थापित कर सकता है।

हमने देखा है कि जब देश के प्रधानमंत्री जी अपने विचारों एवं संस्कृति से उत्प्रेरित होकर कोई बात बोलते हैं तो असंभव बात भी संभव हो जाती है। प्रधानमंत्री

जी ने जब संयुक्त राष्ट्र संघ में अशान्ति का, कलह का, हिंसा का निदान योग बताया तो 177 देशों ने इस पर अपनी सहमति की मोहर लगा दी। यह योग क्या है? गीता के तो सब अठारह अध्यायों में ही योग है। हर अध्याय का नाम योग है। प्रधानमंत्री जी की बात पर प्रतिक्रिया इतनी जल्दी क्रियान्वित हुई कि अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस भी घोषित कर दिया गया। 21 जून को योग दिवस मनाया गया जिसे मान्यता देने वाले तो 177 देश थे, मगर मनाने वाले 185 देश थे। इससे योग की सार्वभौमिकता एवं प्रासांगिकता सिद्ध होती है। यह 21वीं शताब्दी का ऐसा रामबाण है कि देश का ही नहीं पूरे विश्व का नक्शा बदल जाएगा। और विश्व का नक्शा बदलने का दायित्व भी भारत का ही है। भारत एक ऐसा अनोखा देश है जिसने अपने उद्देश्य को, विश्व में कुछ करने की अपनी भूमिका को, अपने कर्त्तव्य को पूरा किया है। अगर आदमी से संभव नहीं हुआ तो इसके लिए खुद भगवान ने यहाँ अवतार लिया। जो सिर्फ भारत के लिए नहीं अपितु पूरे विश्व के लिए है।

जब मैं गीता की सार्वभौमिकता पर विचार कर रहा था तो मुझे एक घटना याद आई। यूनान के राजा सिकन्दर ने ईसा से 300 वर्ष पहले, आज से लगभग 2300 वर्ष पहले एक संकल्प लिया था कि मुझे भारत को जीतना चाहिए, भारत सोने की चिड़िया है। अगर हमने भारत को जीत लिया तो हम विश्व–विजेता बन जाएँगें। उसने निर्णय तो कर लिया परंतु संकल्प को पूरा करने के लिए जब चला तो उसे याद आया कि मैने अपने गुरू से आशीर्वाद तो लिया ही नहीं। उसके गुरू थे अरस्तु। जब गुरू जी से आज्ञा लेने के लिए सिकन्दर पहुंचा तो गुरू जी ने पूछा क्या संकल्प लिया है? सिकंदर ने कहा कि गुरू जी भारत को जीतना चाहता हूँ। गुरू जी ने कहा संकल्प ले लिया तो उसे पूरा करो, मगर भारत को जीत नहीं पाओगे। क्योंकि भारत को तलवार से जीता ही नहीं जा सकता। लेकिन अब जा ही रहे हो तो तीन बातें करके आना– एक तो भारत में किसी संन्यासी के दर्शन करके आना, क्योंकि भारत एक ऐसा देश है जिसका जन्म संन्यासियों ने किया है, संतों और ऋषि–मुनियों ने किया है। वह ऐसा देश नहीं है जिसको किसी राजा ने बनाया हो। पूरे विश्व में भारत ही एक ऐसा राष्ट्र है जिसका जन्मदाता कोई राजा नहीं हैं। इसलिए भारत राजनैतिक राष्ट्र भी नहीं है। इसके जन्मदाता साधु–संत हैं। इसलिए यह एक सांस्कृतिक राष्ट्र है। इसलिए आप भारत को जीत नहीं पाओगे। जा रहे हो तो किसी संन्यासी के दर्शन करके आना। दूसरा काम यह करना कि गंगाजल लेकर आना। गंगा जैसा पवित्र जल पूरे विश्व में आपको कहीं नहीं मिलेगा। और तीसरी बात उसको यह कही कि गीता की पुस्तक लेकर आना। इसलिए गीता की सार्वभौमिकता तभी सिद्ध हो गई थी जब सिकंदर से यह कहा गया कि गीता की पुस्तक लेकर आना।

एक दूसरी बात मुझे और कहनी है कि सृष्टि की रचना किसने की है? सृष्टि की रचना हम सबने नहीं की। इस सृष्टि की रचना ईश्वर ने की है, परमात्मा ने की

है, जिसे आप परमेष्टि कहते हैं। इस सृष्टि की रचना करने के बाद उस परमेष्टि ने, उस परमात्मा ने विभिन्न प्रकार के जीव–जन्तुओं की रचना की। इन सभी जीव–जन्तुओं में सबसे श्रेष्ठ रचना क्या है? वह श्रेष्ठ रचना मानव है। ऐसा कहते हैं कि मानव तो पूरे विश्व में हैं, कोई एक देश में थोड़े ही है। अपने यहां तो ऐसा कहा गया है कि अगर आप मानव का जीवन पाते हैं तो आप पर परमात्मा की विशेष कृपा है। और यदि भारत भूमि पर मानव के रूप में आपने जन्म लिया है तो फिर कहने ही क्या हैं, क्योंकि इस भूमि पर जन्म लेने के लिए तो देवता भी तरसते हैं। यह सब परमात्मा की रचना की बात मैं कर रहा हूँ। लेकिन परमात्मा रचना करते समय यहीं पर नहीं रूके। परमात्मा ने यह भी कहा कि मैं मानव के रूप में तुम्हें भेज रहा हूँ तो तुम जीवन कैसे जीओगे है यह भी मैं बताउँगा। इसलिए भगवान ने जीवन–पद्धति भी दी है। और भारत वर्ष की जीवन पद्धति ऐसी अनोखी है कि व्यक्ति नर के रूप में पैदा होता है और इस जीवन पद्धति को अपनाकर वह नारायण बन जाता है। तो परमात्मा ने सृष्टि की रचना की, मानव की रचना की और इसके साथ–साथ जीवन पद्धति की भी रचना की कि आप जीवन जीओगे कैसे।

आप जिसको पुरूषार्थ कहते हैं उसका मतलब क्या है? पुरूषार्थ का मतलब है पुरूष व अर्थ। लेकिन हमारी संस्कृति के अंदर चार पुरूषार्थ बताए हैं। उसमें पहला है धर्म, दूसरा है अर्थ, तीसरा है काम और चौथा मोक्ष। जीवन–पद्धति में यह बताया गया है कि आप अर्थ का उपयोग करिए, जीवन जीने के लिए भौतिक साधनों की प्राप्ति के लिए आपको अर्थ की जरूरत है। अर्थ को कमाने के बाद उसका उपभोग भी करिए। इस उपभोग का मतलब काम है। लेकिन ध्यान रखिए कि अर्थ और काम ही सब कुछ नहीं है। अर्थ के पहले धर्म लगा हुआ है। इसलिए अर्थ और काम का उपयोग इस ढंग से कीजिए कि धर्माधार जीवन जीएं। धर्म के आधार पर चलिए। और इस ढंग से आप जीवन जीएंगे तो चौथा पुरूषार्थ मोक्ष अपने आप मिल जाएगा। आप ईश्वर के साथ एकाकार हो जाएंगे। यही जीवन पद्धति है। एक बहुत बड़ी विडम्बना है कि जब भी हम धर्म शब्द का प्रयोग करते हैं तो हम धर्म का मतलब साम्प्रदायिक कहते हैं, रिलीजन समझते हैं। इस धर्म और रिलीजन के अंतर को समझो। रिलीजन कभी धर्म नहीं हो सकता और धर्म के बिना कोई आदमी आदमी नहीं हो सकता।

आहार निद्रा भय मैथुनं च। यह संस्कृत का श्लोक है। आहार निद्रा भय मैथुनं च, सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्। जानवर और आदमी में ये चार चीजें समान हैं। आहार चाहिए पेट भरने के लिए, परिश्रम करने के बाद आराम चाहिए, निद्रा। भय भी दोनों को लगता है, डर भी दोनों को लगता है। आप हाथ में रोटी लेकर कुत्ते को बुलाएंगे तो वह समीप आएगा लेकिन हाथ में डंडा उठा लेंगे तो दूर भाग जाएगा। उसको भी डर लगता है। और परिवार चले, संतानोत्पत्ति हो, जीवन चलता रहे यह भी तो हर species में होता है। ये चारों चीजें सभी में समान हैं। तो आहार निद्रा भय मैथुनं च,

सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्। और अंत में उस श्लोक में कहा है–धर्मो हि तेषामधिको विशेषः धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः।।

अर्थात अगर धर्म नहीं है, धर्म से आप हीन हैं, आप धर्म के अनुसार नहीं चलते हैं, भारत वर्ष की ये जो जीवन–पद्धति है वही मनुष्य का प्रयोजन है। उसके अनुसार अगर आप नहीं जीते हैं, धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः।। तो आदमी भी जानवर है।

आप दुर्योधन को आदमी कहेंगे? वह तो धर्म को मानता ही नहीं था। जब श्रीकृष्ण जी उसको आखिरी बार समझाते हैं कि आधा राज नहीं, पाँच गाँव दे दो। पाँच पाँडव हैं, एक–एक गाँव में ये अपना निर्वाह कर लेंगे। तब दुर्योधन क्या कहता है? सूई की नोक के बराबर भी जमीन नहीं दूँगा। वह अगर पाँच गाँव दे देता तो कितना सस्ता सौदा था? लेकिन वह तो आदमी था ही नहीं। तब श्री कृष्ण जी उसको कहते हैं तू जानता नहीं है धर्म क्या होता है? तो दुर्योधन घोषणा करता है– **जानामि धर्मः**– मैं धर्म को जानता हूँ। **न च मे प्रवृति**– लेकिन मेरी प्रवृति में नहीं है, मेरी सोच में नहीं है, मेरे चरित्र में नहीं है। और अंत में कहता है– **जानामि अधर्मः**– मैं अधर्म को भी जानता हूँ। **न च मे निवृति**– लेकिन मैं इसको छोड़ नहीं सकता। अब जो आदमी यह कहे कि मैं अधर्म को नहीं छोड़ सकता तो आप उसे आदमी कहेंगे? यह हर आदमी पर लागू होता है, यह पूरी दुनिया पर लागू होता है। यह बात सिर्फ मैं नहीं कह रहा हूँ बल्कि सुप्रीम कोर्ट ने भी कहा है। जब सुप्रीम कोर्ट में इस पर बहस हुई तो सुप्रीम कोर्ट ने धर्म को संप्रदाय नहीं कहा है, इसे जीवन–पद्धति कहा है।

गीता में जो श्रीकृष्ण जी ने कहा है–

यदा यदा ही धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत, अभ्युथानम् अधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्। परित्राणाय साधुनाम विनाशाय च दुष्कृताम, धर्म संस्थापनार्थाय सम्भावामी युगे युगे।।

यह क्या है धर्म? धर्म मनुष्य की पहचान है। धर्म जाते ही मनुष्य खत्म हो जाता है, वह जानवर हो जाता है। राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के द्वितीय सरसंघचालक के पूज्य गुरू जी की मुझे एक घटना याद आ गई। एक बार उनके पास लॉयन्स क्लब के लोग आए। लॉयन्स क्लब के लोगों ने उनसे निवेदन किया कि आप हमारे कार्यक्रम में आईए, हम आपका संबोधन सुनना चाहते हैं। उन्होंने हाँ कह दिया कि ठीक है, आएँगे। फिर उनसे पूछा कि विषय क्या होगा? उन्होंने कहा कि आप किसी भी विषय पर बोलिए पर धर्म पर मत बोलिए। क्योंकि वे लोग धर्म और रिलीजन में अंतर नहीं समझ रहे थे। गुरू जी उस समय तो कुछ बोले नहीं, क्योंकि उन्होंने हाँ कह दिया था इसलिए वे वहाँ चले गए। जब गुरू जी वहाँ गए तो उनका संबोधन इस तरह था कि मैं अब तक समझ नहीं पाया था कि आपने इस क्लब का नाम लॉयन्स क्यों रखा है,

परन्तु जब आपने कहा कि किसी भी विषय पर बोलिए पर धर्म पर मत बोलिएगा तो मैं समझ गया कि यह लॉयन्स नाम ठीक रखा गया है। तुम लोग आदमी हो ही नहीं।

हमारे यहाँ चिंतकों की, दार्शनिकों की और राजनितिज्ञों की कोई कमी नहीं है। लेकिन आज तक हम यह ही स्पष्ट नहीं कर पाए कि धर्म और रिलीजन में फर्क क्या है? यह रिलिजन शाश्वत धर्म नहीं है, यह मानव धर्म नहीं है, यह रिलीजन युग धर्म है। यह समय के साथ बदलता है। जैसे–जैसे समय बीतता है विभिन्न प्रकार की समस्याएँ आती हैं। उन समस्याओं का निराकरण तत्कालीन परिस्थितियों में निकालना पड़ता है। तब कोई न कोई महापुरूष पैदा होता है और तत्कालीन परिस्थितियों में उन समस्याओं का निराकरण निकालता है। मुगलों के समय में लोगों को नए युग की जरूरत थी, इसलिए गुरू गोबिंद सिंह जी ने खालसा पंथ की स्थापना की। गौतम बुद्ध क्या थे? स्वामी दयानन्द क्या थे? पैगम्बर मोहम्मद क्या थे? ईसा मसीह क्या थे? ये वे महापुरूष हुए हैं जिन्होंने देखा कि समाज को एक नई दिशा देने के लिए नई चीजों की जरूरत है। इसलिए जितने भी रिलीजन हैं इनका कोई न कोई प्रवर्तक है। किसी ने इनको जन्म दिया है। समाज में व्यक्ति को जैसा आचरण करना चाहिए उसके लिए कोई न कोई पुस्तक है। फिर वह कुरान हो सकती है, बाईबल हो सकती है या कोई और पुस्तक हो सकती है।

ये सब युग धर्म हैं, युग के अनुसार आए हैं। बाद में इनमें कुछ न कुछ परिवर्तन होता जाता है। गौतम बुद्ध का जो धर्म था उसमें हीनयान–महायान कहाँ से आए? जैनेजियम में भी कितने पंथ हैं? यह कोई बुराई नहीं हैं। समय समय पर जिन चीजों की जरूरत पड़ती है वे उनका संकलन करके उसे आगे बढ़ाते हैं। यही रिलीजन और धर्म में अंतर है। रिलीजन का कोई न कोई प्रवर्तक है, कोई न कोई पुस्तक है, सबके अपने अनुयायी हैं। और सब अनुयायी कहते हैं कि मेरा रिलीजन सही है, दूसरे का गलत है। लेकिन हमारी संस्कृति तुम भी सही हम भी सही की है। हमारी संस्कृति यह नहीं है कि सिर्फ मैं ही सही।

1893 में शिकागो में क्रिस्चनिटी ने यह सिद्ध करने की कि पूरे विश्व में हम ही सही हैं? इसमें स्वामी विवकानन्द जी ने जाकर यह स्पष्ट किया कि हम भी सही हैं। इसलिए गीता धर्म की स्थापना का ग्रंथ है। यह शाश्वत धर्म है, मानव धर्म है। यह हमेशा सही रहेगा। अगर आप इसे छोड़ देंगे तो आप मानव नहीं रहेंगे जानवर हो जाएँगे। आप हिंसा, अशान्ति, बिना धर्म का आचरण किए जीवन बिताएँ यह हम नहीं चाहते। इसलिए यह सार्वभौमिक है कि जब तक मनुष्य है तब तक जीवन–पद्धति है।

हमारा देश संविधान से चलता है। इसी प्रकार मनुष्य के जीवन का भी कोई संविधान है, नियम कायदे हैं। वह जो जीवन–पद्धति है, इंसान को इंसान बनाती है, जो नर से नारायण बनाती है, जिससे आपका पूरा जीवन संतुलित होता है, वह जो

code of conduct है, वह हमारा धर्म है। इसलिए जिस परमात्मा ने मानव बनाया, जीवन–पद्धति बनाई, जब इस जीवन–पद्धति का ह्रास होता है तो वह स्वयं जन्म लेता है। जीवन–पद्धति का पूरा का पूरा उद्देश्य भगवान ने कुरूक्षेत्र में बताया है।

गीता का एक शब्द में कुछ संदेश देना है तो वह है–निष्काम कर्म। निष्काम कर्म को अंग्रेजी में कहते हैं Desireless Activity. आप कोई भी कर्म अगर स्वार्थ को लेकर करेंगे तो वह कर्म ईश्वरीय नहीं होगा, वह दैवीय नहीं होगा। इसलिए अगर आपने सुख से जीवन बिताना है तो इच्छाओं का दमन करो। मनुष्य जिन चार चीजों का समुच्चय है वे हैं– उसका मन, उसकी बुद्धि, उसका शरीर और उसकी आत्मा। बुद्धि को मन चलाता है और मन को ये इच्छाएँ चलाती हैं। यदि आपने इच्छाओं के अनुसार चलना शुरू कर दिया तो आपके मन का संबंध बुद्धि से टूट जाएगा, बुद्धि का संबंध आत्मा से टूट जाएगा और आप फिर देवत्व की बजाय दानवता की तरफ चले जाएँगे। इसलिए इच्छाओं से बचो। इच्छाओं को व्यसन में मत बदलो। अगर ऐसा किया तो आपका शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा ये चारों की चारों चीजें काम नहीं करेंगी। आप एकात्म मानव नहीं हो पाओगे, महर्षि अरविन्द ने जिसको सुपरमैन कहा। अन्नमय कोष, मनोवय कोष, प्राणमय कोष, ज्ञानमय कोष आनंदमय कोष, ये सब कुछ हमारा शरीर, मन, बुद्धि, प्राण और आत्मा हैं। ये सब के सब सक्रिय बने रहें और सब कुछ सोचकर आप निणर्य करें। अगर आप इच्छाओं के वशीभूत हो जाते हैं तो पागल हो जाते हैं, आप मानवता को भूल जाते हैं, जो मन में आता है वह करते हैं। इन सब से बचने का एक ही तरीका है, वह है–निष्काम कर्म, जो हमारी जीवन पद्धति की व्याख्या करता है। इसलिए जब तक सृष्टि है और यह मानव है तब तक गीता जिन्दा रहेगी। यह सार्वभौमिक है, यह प्रासांगिक है क्योंकि इसका सीधा संबंध मनुष्य के जीवन से है।

धन्यवाद!